VOL- X | ISSUE- VI | JUNE | 2023 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.367 | ISSN 2349-638x

इक्कीसवीं सदीः पर्यावरण विमर्श
(वैदिक पर्यावरण का तुलनात्मक अध्ययन)

राजपाल यादव
शोधार्थी
टाटिया विश्वविद्यालय श्रीगंगानगर

प्रस्तावना–

वर्तमान में हम इक्कीसवीं सदी में जी रहे हैं, जिस प्रकार १९ वीं सदी को ब्रिटेन का समय कहा जाता है, २० वीं को अमेरिकन सदी कहते हैं उसी प्रकार २१ वीं सदी भारत की है। आई.बी.एम. इंस्टिट्यूट फॉर बिजनेस वेल्यू की रिपोर्ट[१] 'इण्डियन सेंचुरी' के अनुसार भारत एक तेजी से बदलने वाली अर्थव्यवस्था हैं, आने वाले वर्षों में भारत को सबसे अधिक उन्नति करने वाले देशों में शामिल किया गया है। स्वतंत्रता के पश्चात हमारे देश ने विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति की है, जैसे - सामाजिक अर्थव्यवस्था में प्रगति, वैज्ञानिक आविष्कार, सांस्कृतिक रूप में समृद्धि और विज्ञान का समुचित विकास, चिकित्सा के क्षेत्र में अनुसंधान आदि कई क्षेत्र हैं जिनमें अब हम आगे बढ चुके हैं।

विकास की विविध गतिविधियों के कारण पर्यावरण में उत्पन्न होने वाले विकारों में सभी देशों का योगदान हैं। विज्ञान के क्षेत्र में असीमित प्रगति तथा नये आविष्कारों की स्पर्धा के कारण आज का मानव प्रकृति पर पूर्णतया विजय प्राप्त करना चाहता है, इस कारण प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है। वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण मानव, पर्यावरण संतुलन की उपेक्षा कर रहा है दूसरी ओर जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि, औद्योगिकरण एवं शहरीकरण की तीव्र गति के कारण हरे भरे क्षेत्रों को समाप्त किया जा रहा है। वर्तमान समय में विश्व पर्यावरण प्रदूषण जैसी भंयकर समस्या का सामना कर रहा है।

प्रस्तुत शोध पत्र में पर्यावरण प्रदूषण की जटिलताओं को सुलझाने के लिये वैदिक चिन्तन का आश्रय लिया गया है मनुस्मृति में लिखा है "भूतं भव्यं भविष्यं....च सर्वं वेदात् प्रसिद्धयति"।[२] अर्थात-वर्तमान भूत और भविष्यत् तीनों कालों की सभी समस्याओं का समाधान वेदों से सिद्ध होता है। अतः पर्यावरण जैसी समस्या का समाधान वर्तमान समय में वेद में निहित है। पर्यावरण क्या है ? पर्यावरण शब्द परि+आवरण दो शब्दों से मिल कर बना है। ऋग्वेद में लिखा हैं[३] कि चारों ओर से धारण करने वाला प्रभाव मण्डल जो कवच के समान रक्षा करने की योग्यता रखता हो अर्थात् जिसने चारों ओर से घेर रखा है, वह पर्यावरण है।

पर्यावरण प्रदूषण[४] से तात्पर्य "मनुष्य के द्वारा ऊर्जा प्रारूप, विकिरण प्रारूप, भौतिक एवं रासायनिक संगठन तथा जीवों की बहुलता में किये गये परिवर्तनों से उत्पन्न प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभावों के कारण आसपास के पर्यावरण में अवांछित एवं प्रतिकूल परिवर्तनों को प्रदूषण कहते है।" अर्थात- प्रकृति में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होना या गिरावट आना प्रदूषण है। वर्तमान समय में आधुनिक चकाचौध की दुनिया व विकास की अंधी दौड में मनुष्य जाने अनजाने में प्राकृतिक वातावरण को दूषित कर रहा है। वैदिक दृष्टिकोणों में प्रदूषण शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है परंतु इस शब्द की मूल धातु दुष् का बहुत प्रयोग

हुआ है। वैदिक वाड्.मय में –मल,कफ, दुरित अहंस, विष, रपस आदि[५] इन सब का तात्पर्य किसी न किसी रूप में प्रकृति में विकृति होने से है। अतः प्रकृति के संघटकों का सुरक्षित सीमा से अधिक असंतुलन प्रदूषण माना जाता है। वर्तमान समय में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, अग्नि (आकाश) प्रदूषण, सामाजिक प्रदूषण तथा वैचारिक (सांस्कृतिक) प्रदूषण जैसे राक्षसों ने जन्म ले लिया है। अतः इन सबसे बचने का मार्ग वेद से ही संभव है।

आधुनिक विश्व एवं प्रदूषित पर्यावरणः–

विश्व की प्रवर्त्तमान विकास प्रक्रिया आज अपनी चरम ऊँचाई को छूने के लिये लालायित सी प्रतीत हो रही है। १६ वीं सदी में इस विकास की प्रक्रिया का आरम्भ मानव के लिये सुविधाएँ जुटाने के लिये हुआ था। अपने इस प्रयास में प्रभुप्रदत बुद्धि के सफल प्रयोग से मानव ने कुछ ही समय में अभूतपूर्व उपलब्धियों को भी प्राप्त किया है। कालान्तर में यह प्रक्रिया विशुद्ध वैज्ञानिक प्रक्रिया हो गई है। जो आधुनिक सभ्यता के विकास में एक महत्वपूर्ण सोपान सिद्ध हुई है।

प्रारम्भ में प्रकृति के ये रहस्य मानव को अद्भुत भी लगे और तब तक प्रकृति के विभिन्न रूपों को अदृश्य शक्ति प्रतिरूप मानकर पूजने वाले समाज में वैज्ञानिक चेतना का अभ्युदय हुआ। यह प्रक्रिया आगे बढ़ी। उपलब्धियों की प्राप्ति से मनुष्य में दम्भ पैदा हुआ और उसने केवल अपने मानसिक विनोद या दम्भ की सन्तुष्टि के लिये शोध की प्रक्रिया जारी रखी, इस क्रम में वह चाहे अनचाहे अनन्त प्रकृति को चुनौती दे बैठा। विकास की यह यात्रा यहीं से पथ विचलित हो गई और कतिपय अहं की तुष्टि के लिये लक्ष्यहीन दिशा की ओर बढ़ने लगी ।

आधुनिक विश्व को पर्यावरण प्रदूषण निराकरण की वैदिक जागृति :– भारतीय ऋषि-परम्परा में शुद्ध पर्यावरण का स्वरूप अधिक स्पष्ट एवं स्वस्थ प्राप्त होता है। प्राचीन भारत में प्रकृति एवं समाज के परिवेश विषयक जो चिन्तन हुआ, वह दुर्घटनाजन्य नहीं था। अपितु एक स्वस्थ पर्यावरण की कामना से प्रसूत था। वैदिक साहित्य में स्वस्थ पर्यावरण का बहुआयामी स्वरूप प्राप्त होता है। वेदों ने पर्यावरण की विचारणा परिधि, परिभू, परिवेश एवं परिमण्डल शब्दों से की है। इस क्रम में वे संसारिक परिवेश के सन्तुलन संस्थापक तत्वों में देवत्व की कल्पना करते हैं। वेद स्वस्थ सामाजिक पर्यावरण के लिये परिवार में माता पिता, पुत्र, पुत्रवधू आदि के व्यवहार एवं समाज में सामंजस्य समानो मन्त्रः समितिः समानी[६] स्थापना के उपाय तथा पद पद पर नैतिकता आदि की शिक्षाएँ देता है और यजुर्वेद तो ब्रह्माचारी (विद्यार्थी) के चरित्र शोधन जैसी महत्वपूर्ण घोषणा भी करता है (चारित्राँस्ते शुन्धामि।) वेद की दृष्टि में पर्यावरण भौतिक पदार्थ जन्य नहीं अपितु मानवीय मनोवृत्तियों का प्रभाव है।

वेदों की शिक्षाएँ एवं वेद उच्च मानवीय आदर्शो पर आधारित है और साथ ही मानवीय संवेदनाओं का संरक्षण उसका मुख्य लक्ष्य है। अन्तरिक्ष के साथ छेड़छाड़ न करने (द्यौः मा विलेखीः) पेड़ को समूल नष्ट न करने औषधस्त मूलं मा हिंसिषम्) की घोषणाएँ उनकी इसी बाह्य पर्यावरणीय चेतना को दर्शाती है। वैदिक मन्त्रद्रष्टा ऋषि हमें त्यागपूर्वक भोग की शिक्षा देते हैं तेन त्यक्तेन भुन्जीथाः, त्याग पूर्वक भोग से तात्पर्य अत्यावश्यक योग्य वस्तुओं के प्रयोग से है।

पर्यावरण में बढ़ रही कार्बन डाई आक्साइड, अम्लवर्षा, भूक्षरण, बंजरीकरण आदि अनेक समस्याओं से हम केवल बहुजातीय वनों को लगाकर छुटकारा पा सकते हैं। हम ऋणी हैं - पुराणकारों के जिन्होनें वर्षो पूर्व हमें चेताया और "एक वृक्ष को दशपुत्रों के समान " सम्मान देने की तार्किक चेतना जगाई। अथर्ववेद ने जिस महनीय भूमि की कल्पना की है वह सुम्य वनों से आच्छादित है। अनेक विषैली गैसें एवं तत्वों को आत्मसात[८] करने वाले इन शिवरूप वृक्षों को यजुर्वेद" नमः वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः" कहकर नमन करते हुए

मानवों के लिये वृक्षों के महत्व की ओर संकेत करता है।

ऋषियों की प्राकृतिक शक्तियों में देवत्व की कल्पना का दार्शनिक सिद्धान्त यह रहा है कि उन्होनें प्रकृति को जड़ नहीं माना। अपितु दिव्य सामर्थ्य से युक्त मोक्ष में सहायक माना। इसीलिये प्राकृतिक पदार्थो के मनमाने प्रयोग को प्रतिषिद्ध किया। अपने साहित्यिक ग्रन्थों में प्रकृति के दिव्य स्वरूप के दर्शन कराये, जिससे सभी प्राकृतिक पदार्थो के प्रति पूज्य भाव बना रहे। मन में यह सिद्धान्त पैठ कर जाए कि प्रकृति की सभी वस्तुएँ रक्षणीय हैं, उनका केवल तभी प्रयोग करना चाहिये जब वे जीवन के लिये आवश्यक हो, भारतीयों ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश पंचभूतों के पीछे छिपी दिव्य सत्ता को पहचाना और वृक्षों में, औषधियों में, नदियों में, सरोवरों में, पर्वतों में , प्राणियों में दिव्य भाव के दर्शन किये। नदियों को तीर्थ स्थान, हिमालय को देवात्मा एवं देवताओं को निवास स्थान माना। जिसे प्रकृति की अभिव्यक्ति में अपना ध्यान केन्द्रित कर दिव्यत्व को ग्रहण किया जा सके।

वैदिक दृष्टि एवं वृक्ष - वानस्पतिक जगत :-

संसार में विकसित मानव सभ्यता में वैदिक सभ्यता एक मात्र ऐसी सभ्यता है जो समस्त भूतों के अस्तित्व को एक चेतन के रूप में स्वीकार करती है। वेद सृष्टि में अचेतन प्रतीत होने वाली, किन्तु नियामक शक्तियों के प्रति अति सजग है। वैदिक प्रार्थनाओं में हम सूर्य से अनुकूल ताप, वायु से अनुकूल प्रवहन एवं पवित्र करने, पर्जन्य से सम्यक् वृष्टि की कामना प्राप्त होती है।

ऋग्वेद की यही भावना अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में पूर्ण विकसित रूप में प्राप्त होती है। जहाँ वेद ने पृथिवी की विशेषताओं का विस्तृत वर्णन करते हुये स्वयं को भूमि का पुत्र स्थापित किया है - "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। "[9] पंचभूतों के विषय में शान्तिपाठ के रूप में प्रसिद्ध वैदिक मंत्र में उदात्त भावनाएँ और भी स्पष्टता के साथ प्राप्त होती हैं, जहाँ मानव अपनी शांति के लिये समस्त भौतिक पदार्थो की शांति की कामना करता हुआ कहता है कि इन सब सृष्टि के संघटकों में फलित शांति मुझे शांति प्रदान करें।

इसी प्रकार वेद वनस्पति की रक्षा के लिये भी अत्यंत सजग था। वे वनस्पति के समूलोच्छेदन का दृढतापूर्वक निषेध करते है । ऋग्वेद के एक मंत्र का भाष्य करते हुये महर्षि दयानन्द ने उसके अनेक लाभों का वर्णन किया है। वैदिक परम्परा वृक्षों में देवों का निवास मानती है। संभवतया यह मान्यता वृक्ष एवं वनस्पतियों के हितकारित्व को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है।

निष्कर्षतः

यह कहा जा सकता हैं कि वर्तमान प्रदूषण निराकरण उपायों से वैदिक उपायों की तुलना करते हैं तो यह स्पष्ट होता हैं कि वैदिक निराकरण उपायों के सामने आज किये जाने वाले उपाय बौने सिद्ध होते है । ऋषियों की दूरदृष्टि सारगर्भित थी । वर्तमान उपाय एक नई समस्या उत्पन्न कर रहे हैं, वहीं वैदिक उपाय समस्या को जड़ से समाप्त करने में कारगर सिद्ध होते हैं। महर्षि दयानन्द ने कहा था "वेदो की ओर लौट चलो" आज इस कथन का समय आ गया है । प्रदूषण ही नहीं यदि सृष्टि का संतुलन बनाये रखना है तथा इसे विनाश से बचाना है तो वेदों के अध्ययन एवं शोध की अत्यंत आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से शोधकर्ता ने जनमानस तक पर्यावरण संरक्षण के वैदिक चिंतन को पहुँचाने का विनम्र प्रयास किया है।

संदर्भ -

१- http://hindi.indiawaterportal.org/node/46917
२. मनुस्मृति - १२/९७
३. ऋग्वेद - १/१२५/७
४. पर्यावरण भूगोल - डॉ. सविन्द्र सिंह, पृष्ठ ३४३
५. ऋग्वेद - ७/१०४/९ अथर्ववेद - ८/११५/३,

३/१०/१ ---१०

६. ऋग्वेद - १०/१९२/३

७. यजुर्वेद - ६/१४

८. यजुर्वेद - १६/१७

९. अथर्ववेद - १२/१/१२